विचार संगम

भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

विचार संगम

भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,
अजमेर

Books n Books

51/1509, आचमन, वेदविहार,
लोहाखान, अजमेर-305001

प्रकाशक :

पुष्पा शर्मा

Books n Books

51/1509, आचमन, वेदविहार,
लोहाखान, अजमेर-305001
ई-मेल : bnbajmer@gmail.com

संस्करण
प्रथम 2025

ISBN : 978-81-993854-0-5

मूल्य - 400/-

रचना - विचार संगम-भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

16

अजमेर में आर्य समाज की शिक्षण संस्थायें और राष्ट्रीय आंदोलन

राहुल कुमार
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

अजमेर में आर्य समाज की स्थापना (3 फरवरी 1881) ने राजस्थान में सामाजिक, धार्मिक और राष्ट्रीय चेतना का नया अध्याय आरंभ किया। स्वामी दयानंद सरस्वती ने यहाँ अंधविश्वास, मूर्तिपूजा, छुआछूत आदि कुरीतियों का विरोध करते हुए 'स्वराज, स्वदेशी और स्वभाषा' का संदेश दिया। 1878 में अजमेर में ईसाई पादरी हस्बैण्ड से हुए शास्त्रार्थ ने उनके विचारों को और व्यापक प्रसिद्धि दी। उनके निधन के पश्चात् 1888 में 'आर्य प्रतिनिधि सभा, राजस्थान–मालवा' की स्थापना हुई, जिसने आर्य समाज की शिक्षण संस्थाओं और राष्ट्रीय आंदोलन को संगठित रूप दिया। हरविलास शारदा, डॉ. कृष्णलाल और अन्य सदस्यों ने समाज सुधार और शिक्षा के प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस प्रकार, अजमेर आर्य समाज आंदोलन का केंद्र बनकर राष्ट्रीय जागरण की भूमि सिद्ध हुआ।

अजमेर में आर्य समाज की स्थापना 3 फरवरी 1881 ई. को हुई, जिसके बाद यहाँ समाज सुधार, शिक्षा विस्तार और राष्ट्रीय चेतना का आंदोलन तीव्र रूप से प्रारंभ हुआ। महर्षि दयानंद सरस्वती ने आर्य समाज के माध्यम से सम्पूर्ण जनजागृति का अभियान प्रारंभ किया। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों, मूर्तिपूजा, छुआछूत और अंधविश्वासों का विरोध करते हुए भारतीय समाज में आत्मगौरव और स्वाभिमान की भावना जागृत की।

1881 के बाद अजमेर में आर्य समाज ने शैक्षिक, सामाजिक और राजनीतिक तीनों क्षेत्रों में व्यापक जागरण किया। महर्षि दयानंद ने वेदों पर आधारित सादगी, सत्य और आत्मनिर्भरता की भावना जगाई। टैगोर ने उन्हें राष्ट्र के आत्मसम्मान का जागरणकर्ता बताया और सुभाष बोस ने उनके आंदोलन को भारत के पुनर्निर्माण का प्रमुख कारक माना। इस प्रकार, आर्य समाज ने अजमेर को शिक्षा और राष्ट्र चेतना का केन्द्र बनाकर आधुनिक भारत के निर्माण में ऐतिहासिक भूमिका निभाई।

1889 ई. के बाद अजमेर में आर्य समाज ने पुष्कर, शीतला माता, रामदेवजी,

तेजाजी आदि मेलों में वैदिक सिद्धांतों द्वारा जनजागरण का अभियान चलाया। इस आंदोलन का विरोध ईसाइयों, मुसलमानों और रूढ़िवादी हिंदुओं ने भी किया। आर्य समाज ने धार्मिक अनुष्ठानों को वैज्ञानिक और शैक्षिक अर्थ दिए, जिससे स्वास्थ्य, योग और आत्मशुद्धि की भावना को बल मिला। महात्मा गांधी ने इसे छुआछूत के विरोध और मानवता के पक्ष में बताया। आर्य समाज का ध्येय था—आर्यावर्त के खोए मूल्यों को पुनः स्थापित कर समाज को पाश्चात्य प्रभावों से मुक्त करना; इस प्रकार यह एक सशक्त हिन्दू पुनर्जागरण आंदोलन बन गया।

अजमेर में आर्य समाज ने अकाल, बाढ़ और प्लेग जैसी प्राकृतिक आपदाओं के समय रचनात्मक सहयोग देकर मानव सेवा का आदर्श प्रस्तुत किया। यहाँ के शिक्षित मध्यमवर्ग और युवकों ने सामाजिक सुधार और सांस्कृतिक पुनर्जागरण की भावना से आर्य समाज की स्थापना की। साप्ताहिक सत्संग, हवन, भजन और उपदेशों के माध्यम से समाज में जागृति फैली। आर्य समाज का आंदोलन केवल धार्मिक सुधार तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसने शैक्षिक और राजनीतिक चेतना भी जगाई। स्वामी दयानंद ने भारतीय संस्कृति के गौरव को पुनः प्रतिष्ठित कर समाज को जड़ता, अन्याय और शोषण से मुक्त करने का मागज़ प्रशस्त किया।

महर्षि दयानंद सरस्वती ने अजमेर में एंग्लो-वैदिक विद्यालय स्थापित कर शैक्षिक आंदोलन का सूत्रपात किया। आर्य समाज ने शिक्षा को राष्ट्रीय पुनर्जागरण का माध्यम बनाते हुए भारतीयता और वैदिक आदर्शों पर आधारित पाठविधि को अपनाया। स्वामी दयानंद ने भारतीयों को उनकी गौरवशाली संस्कृति, धर्म और भाषा के प्रति जागरूक किया। उनके पूर्व राष्ट्रवाद अंग्रेजी शिक्षित मध्यमवर्ग तक सीमित था, परंतु दयानंद ने उसमें स्वाभिमान, स्वदेशी और सांस्कृतिक चेतना का संचार कर भारतीय राष्ट्रवाद को जन-जन तक पहुँचाया।

आर्य समाज ने अंग्रेजी शिक्षा के साथ वैदिक शिक्षा आदर्शों को पुनर्जीवित कर भारतीय शिक्षा में नई चेतना भरी। उसने लोकतांत्रिक, आध्यात्मिक, स्वावलंबी और वैज्ञानिक मूल्यों पर आधारित शिक्षा प्रणाली को विकसित किया। स्वामी दयानंद ने बाल्यावस्था से ही शिक्षा को अनिवार्य माना और माता-पिता, गुरु तथा समाज को इसका दायित्व सौंपा। आर्य समाज राष्ट्रीय शिक्षा की आधारशिला रखने वाली पहली संस्था बनी, जिसने शिक्षा को भारतीयों के नियंत्रण में रखने, उसमें देशभक्ति और सांस्कृतिक गौरव को शामिल करने का आग्रह किया। दयानंद ऐंग्लो-वैदिक विद्यालय और गुरुकुलों की स्थापना इसी राष्ट्रीय शिक्षा दर्शन की परिणति थी।

स्वामी दयानंद के अनुसार शिक्षा वह है जिससे मनुष्य विद्या, सद्गुण, सभ्यता, धर्मनिष्ठा और आत्मसंयम प्राप्त कर सके तथा अज्ञान, पाप और दुराग्रह जैसे दोषों से

मुक्त हो जाए। उन्होंने शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन नहीं, बल्कि व्यक्तित्व विकास और नैतिक उत्थान का माध्यम माना। उनके मत में सच्ची शिक्षा वही है जो वेदसम्मत होकर समाज में सत्य, धर्म और मानवता की स्थापना करे।

महर्षि दयानंद का मानना था कि मैकाले की अंग्रेजी शिक्षा पद्धति भारत के उत्थान के बजाय उसके सांस्कृतिक, नैतिक और राष्ट्रीय मूल्यों के विनाश का कारण बनी। उन्होंने स्वभाषा, स्वसंस्कृति और वेदाधारित आश्रम शिक्षा पद्धति को भारत के पुनरुद्धार का आधार माना। दयानंद ने संस्कृत और वैदिक अध्ययन के प्रसार के लिए सरकार, राजाओं और समाज को प्रेरित किया, स्वयं पाठशालाएँ स्थापित कीं और वेदशास्त्रों के प्रचार हेतु ग्रंथ प्रकाशित किए। कठिन परिस्थितियों में भी उन्होंने भारत में वैदिक शिक्षा और आत्मगौरव की पुनर्स्थापना का अभियान चलाया।

महर्षि दयानंद का विश्वास था कि जब तक शिक्षा का व्यापक प्रसार नहीं होगा, तब तक राष्ट्र का उद्धार संभव नहीं। उन्होंने अनिवार्य और निःशुल्क शिक्षा तथा समाज-आधारित शिक्षण की वकालत की। उनकी शिक्षा व्यवस्था समानता पर आधारित थी, जिसमें अमीर-गरीब, राजा-प्रजा सभी के लिए समान भोजन, वस्त्र और शिक्षा का प्रावधान था। आर्य समाज ने उनके इन आदर्शों को अपनाकर एक ओर गुरुकुल परंपरा को पुनर्जीवित किया और दूसरी ओर दयानंद ऐंग्लो-वैदिक (डी.ए.वी.) संस्थाओं की स्थापना कर राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन को गति दी। इस प्रकार उन्होंने अंग्रेजी शिक्षा की विसंस्कृत दिशा के विरुद्ध भारतीयता और स्वाभिमान पर आधारित शिक्षा प्रणाली की नींव रखी।

अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव से भारत में प्राचीन ज्ञान, परंपराओं और धर्म को अंधविश्वास मानकर उपेक्षित किया गया। इस परिस्थिति में स्वामी दयानंद ने शिक्षा के क्षेत्र में नियमबद्ध, वैदिक और राष्ट्रोन्नमुख विचारों को पुनर्जीवित करने का कार्य किया। उन्होंने एक ऐसी शिक्षा योजना प्रस्तुत की जो भारतीय संस्कृति, धर्म और नैतिक मूल्यों पर आधारित थी। उनके अनुयायियों ने इन्हीं सिद्धांतों से प्रेरित होकर भारत में नवीन शैक्षिक व्यवस्था की नींव रखी, जिससे राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक पुनर्जागरण को बल मिला।

स्वामी दयानन्द की मृत्यु (1883 ई.) के बाद डी.ए.वी. आंदोलन ने उनके शिक्षा-सिद्धांतों को आगे बढ़ाया। 1884 में लाहौर डी.ए.वी. कॉलेज ने इस राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन की नींव रखी। इन संस्थाओं ने सामाजिक सुधार और राष्ट्रनिर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और नई चुनौतियों का सामना राष्ट्रीय एकता की भावना से करने का आह्वान किया।

लाला लाजपतराय, गुरुदत्त और स्वामी श्रद्धानन्द जैसे नेताओं ने शिक्षा को

राष्ट्रीय जागरण का माध्यम माना। श्रद्धानन्द ने दयानन्द के आदर्शों पर आधारित गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना कर वैदिक परंपरा पर आधारित भारतीय शिक्षा प्रणाली को पुनर्जीवित किया।

डी.ए.वी. शिक्षण आंदोलन के प्रभाव से अजमेर में आर्यसमाज का शिक्षा आंदोलन प्रारंभ हुआ। उस समय अंग्रेजी और पारंपरिक भारतीय शिक्षा पद्धतियाँ साथ-साथ चल रही थीं। अंग्रेजी शिक्षा को नौकरी का साधन मानकर लोग उसकी ओर आकर्षित हो रहे थे, वहीं मिशनरियों ने भी शिक्षा के माध्यम से प्रभाव जमाने का प्रयास किया।

इसी परिप्रेक्ष्य में आर्यसमाज ने 1888 ई. में केसरगंज, अजमेर में दयानन्द आश्रम स्कूल की स्थापना की, जो आगे चलकर दयानन्द आश्रम ऐंग्लोवैदिक स्कूल कहलाया। इस विद्यालय ने नैतिकता, भारतीय संस्कृति और मूल्यपरक शिक्षा को अपनाकर शीघ्र ही जनसामान्य में लोकप्रियता प्राप्त की।

डी.ए.वी. स्कूल, अजमेर की लोकप्रियता का कारण हिन्दी माध्यम, शारीरिक-मानसिक विकास और वैदिक नैतिक शिक्षा थी। दीवान बहादुर हरविलास शारदा के अनुसार, इसकी सफलता का मूल कारण भारतीय संस्कृति आधारित वैदिक शिक्षा और विदेशी प्रभाव से दूर रहने की नीति थी। समाज के प्रतिष्ठित वर्गों ने आर्थिक सहयोग देकर अपने बच्चों को यहाँ शिक्षित कराया।

डी.ए.वी. स्कूल की सफलता से प्रेरित होकर आर्यसमाज ने विजयनगर (1915) और नसीराबाद (1923) सहित कई स्थानों पर विद्यालय खोले तथा ग्रामीण क्षेत्रों (जैसे सराधना, पीसांगन, मांगलियावास आदि) में शिक्षा और समाज सुधार का प्रचार किया।

महिला शिक्षा के क्षेत्र में भी आर्यसमाज ने अग्रणी भूमिका निभाई। 1904 ई. में गुलाबदेवी माहेश्वरी ने स्त्री आर्यसमाज की स्थापना की और बाद में गुलाबदेवी मथुराप्रसाद स्कूल खोला। सुखदा शारदा, पावर्ती शारदा, घीसीबाई माहेश्वरी आदि लगभग 94 महिलाओं के सहयोग से स्त्रियों में शैक्षिक एवं सामाजिक जागरण हुआ, जिससे आगे चलकर राजनीतिक चेतना का भी विकास हुआ।

1898 ई. में अजमेर की पुरानी मंडी में पहली 'आर्यपुत्री पाठशाला' की स्थापना हुई, जहाँ 1947 तक छात्राओं को नि:शुल्क शिक्षा, सामग्री और गणवेश प्रदान किए जाते थे। आर्यसमाज की इन शिक्षण संस्थाओं ने अछूतोद्धार, पद्यप्रथा उन्मूलन, बालविवाह विरोध, महिला शिक्षा और वैदिक संस्कृति के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

गुलाबदेवी माहेश्वरी ने महिलाओं को हस्तकला और राजनीतिक जागरण का

प्रशिक्षण देकर आत्मनिर्भर बनाया। 1913 ई. में गोदावरी देवी ने ब्यावर में 'गोदावरी आर्य कन्या पाठशाला' खोली। 1928 में अजमेर की आर्य महिला सदस्याओं ने 'पर्दा निवारक मंडली' का गठन किया।

स्वामी दयानन्द की स्मृति में भिनाय कोठी और ऋषि उद्यान, पुष्कर रोड पर स्मृति स्थल बनाकर आर्यसमाज ने शैक्षिक, सामाजिक और राजनीतिक जागरण का आंदोलन चलाया।

दीवान हरविलास शारदा ने समाज सुधार की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए 1929 में बाल विवाह निषेध कानून पारित कराया, जिसमें विवाह की न्यूनतम आयु लड़कियों के लिए 14 वर्ष और लड़कों के लिए 18 वर्ष निर्धारित की गई। यह वही विचार था जो महषिज़ दयानन्द ने पहले ही स्पष्ट किया था कि — ''जिस देश में बाल्यावस्था में ब्रह्मचर्य और विद्या के बिना विवाह होते हैं, वह देश दु:ख में डूब जाता है।''

स्वामी दयानन्द बाल विवाह के कट्टर विरोधी थे। उनका मत था कि अपरिपक्व अवस्था में विवाह से वर-वधू दोनों का शारीरिक क्षय होता है और उनसे उत्पन्न संतान अल्पायु होती है। अत: उन्होंने सरकारों से ऐसे विवाहों को प्रतिबंधित करने की मांग की थी तथा महाराणा सज्जनसिंह (उदयपुर) को भी बाल विवाह रोकने के निर्देश दिए थे।

राजस्थान के विभिन्न रियासतों—भरतपुर (1926), कोटा (1926), बीकानेर (1928), जोधपुर (1930) में विवाह की न्यूनतम आयु के निर्धारण में आर्यसमाज के प्रयासों का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

दीवान हरविलास शारदा ने अजमेर में बाल विवाह का विरोध करते हुए कई विवाहों को रोका, जैसे माधोसिंह की 13 वर्षीय पुत्री का विवाह (1933)। आर्यसमाज ने केवल बाल विवाह ही नहीं, बल्कि विधवा पुनर्विवाह को भी सामाजिक मान्यता दिलाई।

अजमेर में स्त्री आर्यसमाज के प्रयासों से- 1935 में मानकंवरी (खण्डेलवाल वैश्य) का विवाह उदयपुर के गोपीलाल से, 1936 में हंसाबाई (माहेश्वरी समाज) का विवाह माधोलाल से कराया गया। सत्यदेव विद्यालंकार द्वारा प्रकाशित 'राजस्थान' पत्र (1925) ने भी इस विचार को बल दिया। इसके परिणामस्वरूप कई समाजों— राजपूताना विमेन एसोसिएशन, मारवाड़ी प्रान्तीय पंचायत, अग्रवाल, जैन, कायस्थ आदि ने विधवा विवाह का समर्थन किया।

महिलाओं के पुनर्वास हेतु 'वनिता आश्रम' (मदारगेट, अजमेर) की स्थापना हुई, जहाँ निराश्रित व विधवा स्त्रियों को आत्मनिर्भर बनाया गया और आर्यपुत्री एवं आर्यकन्या पाठशालाओं में नि:शुल्क शिक्षा दी गई। इस आश्रम में 64 विधवा विवाह

कराए गए जो आर्यसमाज के सामाजिक पुनर्जागरण का सशक्त प्रमाण हैं।

अजमेर में वनिता आश्रम ने विधवा पुनर्विवाह और महिला उत्थान के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया, परंतु इसे कट्टरपंथी ब्राह्मणों के विरोध का भी सामना करना पड़ा। इसी काल में 1927 ई. में लाहौर की 'गंगाराम विधवा सहायक सभा' की शाखा खुली, जिसने बालविवाह, अनमेल विवाह, कन्या-वध और सतीप्रथा का विरोध करते हुए विधवा विवाह को बढ़ावा दिया।

वनिता आश्रम को आर्यसमाज से आर्थिक, शैक्षणिक और प्रशासनिक सहयोग प्राप्त था, जिसके परिणामस्वरूप अजमेर में व्यापक सामाजिक जागरण हुआ।

महर्षि दयानन्द का मत था कि— बहुत वृद्ध पुरुष का विवाह कुमारी कन्या से अनुचित है; वर की आयु कन्या की तुलना में न्यूनतम डेढ़ गुनी और अधिकतम दूनी होनी चाहिए; वे बहुविवाह के विरोधी थे और वेदसम्मत एक-पत्नी, एक-पति पर आधारित विवाह व्यवस्था के समर्थक थे।

विधवा और विधुर पुनर्विवाह की समस्या के समाधान हेतु स्वामीजी ने 'नियोग प्रथा' का समर्थन किया। उनके अनुसार नियोग से— व्यभिचार का अंत, श्रेष्ठ संतान की उत्पत्ति, वंश की वृद्धि और गर्भहत्याओं में कमी संभव है। इस प्रकार, स्वामी दयानन्द ने सामाजिक शुचिता, नारी सम्मान और वैदिक मर्यादाओं पर आधारित नवीन सामाजिक व्यवस्था का प्रतिपादन किया।

आर्यसमाज ने समाज-सुधार की दिशा में क्रांतिकारी कार्य किए। स्वामी दयानन्द के नेतृत्व में विधवा-विवाह, दलितोद्धार और शुद्धि आन्दोलन प्रमुख थे। जहाँ एक ओर अलवर जैसी रियासतों में विधवा-विवाह पर प्रतिबंध था, वहीं आर्यसमाज ने विरोध सहकर भी सैकड़ों विवाह सम्पन्न कराए। दलितोद्धार के क्षेत्र में स्वामी दयानन्द ने वेदों के आधार पर समानता का सिद्धांत प्रतिपादित किया और यह बताया कि समाज के सभी वर्ग एक ही मानव शरीर के अंग हैं। अजमेर में आर्यसमाज ने निःशुल्क शिक्षा, प्रीतिभोज और यज्ञ जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से दलितोद्धार आन्दोलन को व्यावहारिक रूप दिया।

1930 के बाद आर्यसमाज ने अजमेर की अछूत बस्तियों में सत्संग, यज्ञोपवीत संस्कार और धार्मिक कथाओं के माध्यम से दलितोद्धार कार्य प्रारम्भ किया। 1934 में आर्य दलितोद्धार हितकारिणी सभा की स्थापना कर अछूतों के शैक्षणिक, नैतिक और सामाजिक उत्थान के प्रयास किए गए। गांधीजी भी आर्यसमाज के इन कार्यों से प्रभावित हुए। आर्यसमाज के सहयोग से अजमेर नगरपालिका ने हरिजन बस्तियों में स्कूल खोले और शिक्षण हेतु दलित शिक्षकों की नियुक्ति की। निःशुल्क शिक्षा, वस्त्र और भोजन की व्यवस्था कर आर्यसमाज ने सामाजिक समानता और जनजागरण को

बल दिया। साथ ही, स्वामी दयानन्द के स्वराज, स्वदेशी और स्वभाषा के सिद्धांतों से प्रेरित होकर आर्यसमाज ने राजनीतिक चेतना भी फैलायी।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने स्वराज्य को पूर्ण राजनीतिक स्वतंत्रता और प्रभुसत्ता सम्पन्न राज्य के रूप में परिभाषित किया। उन्होंने यजुर्वेद के आधार पर कहा कि मनुष्य को पराधीनता छोड़कर स्वाधीनता को अपनाना चाहिए। उनकी प्रार्थना थी कि भारतवासी कभी पराधीन न हों और अन्य देश के शासक हमारे देश पर शासन न करें। उन्होंने भारतीयों के स्वशासन और अखण्ड भारत की कल्पना की।

राजपूताना में स्वामीजी ने मनुस्मृति के सिद्धांतों पर आधारित न्यायपूर्ण और धर्मपरायण शासन व्यवस्था का प्रचार किया। उनके अनुसार राज्य के उद्देश्य थे—धर्म की मर्यादा की स्थापना, न्यायपूर्ण दंड-प्रणाली, दुष्टों का नाश, प्रजा का कल्याण और अंतत: मोक्ष की प्राप्ति।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का प्रमुख लक्ष्य राजनीतिक स्वतंत्रता था। वे 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग करने वाले पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग और विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का संदेश दिया तथा हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया। उनके विचारों से ए.ओ. ह्यूम जैसे नेता भी अत्यंत प्रभावित थे। स्वामीजी का नारा 'वेदों की ओर लौटो' धार्मिक होते हुए भी राजनीतिक दृष्टि से 'भारत भारतीयों के लिए' का रूप धारण कर गया। उन्होंने 'हिन्दू' के स्थान पर 'आर्य' और 'हिन्दुस्तान' के स्थान पर 'आर्यावर्त' शब्द के प्रयोग का आग्रह किया।

अजमेर में राजनीतिक चेतना के लिए स्वामी दयानन्द ने 1878 से 1881 ई. तक ठिकानों और इस्मतदारों से मिलकर समाज में राष्ट्रीय जागरण और शैक्षिक विकास का कार्य किया।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने राजपूताना के ठिकानों और इस्मतरारदारों में राजनीतिक चेतना जगाने का प्रयास किया। उन्होंने खरवा, मसूदा, भिनाय, पीसांगन आदि ठिकानों के राजाओं व ठाकुरों को स्वराज, स्वभाषा और स्वदेशी शिक्षा का महत्व समझाया। अजमेर में राजपूताना बोर्डिंग हाउस (1907 ई.) की स्थापना और क्षत्रिय सभा द्वारा 'राजस्थान समाचार' पत्र का प्रकाशन आर्यसमाज की राजनीतिक जागृति के अंग थे।

खखा ठाकुर राव गोपाल सिंह, रामविलास शारदा और बिरदीचंद जैसे आर्यसमाजी कार्यकर्ताओं ने स्वदेशी, स्वराज और हिन्दी भाषा के प्रचार के लिए सक्रिय आन्दोलन चलाया।

स्वामीजी का विश्वास था कि देश का उत्थान तभी संभव है जब रजवाड़े सुधरेंगे, क्योंकि सुधरे हुए राजा ही जनता के नैतिक व राजनीतिक विकास का आधार

बन सकते हैं। उनकी प्रेरणा से उदयपुर नरेश महाराणा सज्जन सिंह ने राजकीय संस्थाओं को संस्कृत नाम दिए — जैसे 'महद्राज सभा', 'शिल्प सभा' आदि जो भारतीयता और स्वराज भावना के प्रतीक बने।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की राष्ट्रीय विचारधारा इतनी प्रभावशाली थी कि वेलेंटाइन चिरॉल ने उनके बारे में लिखा — "मैं दास बनने के लिए नहीं, स्वशासन के लिए जन्मा हूँ।" यही भावना बाद में लाला लाजपतराय, भाई परमानन्द, भगतसिंह, रामप्रसाद बिस्मिल जैसे क्रांतिकारियों में दिखाई दी।

स्वामी श्रद्धानन्द ने 1919 ई. में गांधीजी के आन्दोलन का नेतृत्व किया, जबकि हरविलास और रामविलास शारदा ने 1888 ई. प्रयाग कांग्रेस अधिवेशन में भाग लेकर आर्यसमाज की राजनीतिक चेतना को आगे बढ़ाया।

श्यामजी कृष्ण वर्मा, जो दयानन्दजी के शिष्य थे, ने अजमेर में वकालत की, म्यूनिसिपल कमेटी के उपाध्यक्ष रहे और स्वदेशी उद्योगों व वैदिक धर्म के प्रचार में योगदान दिया।

डी.ए.वी. कॉलेज और आर्यसमाज की संस्थाएँ उत्तर भारत में राष्ट्रीयता और स्वराज्य की भावना की प्रमुख संवाहक बनीं। ब्रिटिश सरकार ने भी यह स्वीकार किया कि पंजाब व राजपूताना में बढ़ते राष्ट्रीय आन्दोलन की जड़ें दयानन्द की शिक्षाओं में निहित थीं, जिन्होंने भारतीयों में स्वराज्य, स्वदेशी और आत्मगौरव का भाव उत्पन्न किया।

सरदार भगतसिंह के परिवार का आर्यसमाज से गहरा संबंध था — उनके दादा सरदार अर्जुनसिंह और चाचा सरदार अजीतसिंह दोनों आर्यसमाजी थे और जालंधर के डी.ए.वी. स्कूल से शिक्षित थे। इन्हीं आर्यसमाजी शिक्षण संस्थाओं ने भारतीय युवाओं में देशभक्ति और स्वराज्य की भावना का संचार किया।

डी.ए.वी. स्कूल और कॉलेज पूरे भारत में राजनीतिक जागरण के केन्द्र बन गए। आर्यसमाज की शिक्षा से प्रेरित छात्रों ने गांधीजी के असहयोग आन्दोलन और अन्य राष्ट्रीय आंदोलनों में सक्रिय भाग लिया।

ब्रिटिश सरकार इन संस्थाओं को राजद्रोह का केन्द्र मानती थी। अंग्रेज अधिकारियों जैसे जे.एच. रिची और ए.सी. इलियट ने रिपोर्ट दी कि डी.ए.वी. कॉलेज के छात्र विद्रोही प्रवृत्ति के हैं, इसलिए उन्हें सरकारी नौकरियों से वंचित रखा जाए।

यह तथ्य इस बात का प्रमाण है कि आर्यसमाज और उसकी शिक्षण संस्थाओं ने स्वतंत्रता संग्राम की चेतना फैलाने और युवाओं में राष्ट्रीय स्वाभिमान एवं आत्मनिर्भरता की भावना जागृत करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

आर्यसमाज ने उत्तर भारत में राष्ट्रीय जागरण और क्रांतिकारी आंदोलन का

शंखनाद किया। कुंवर चांदकरण शारदा ने 'राजपूताना मध्य भारत सभा' और बाद में 'हिन्दू सभा' (1923) के माध्यम से सामाजिक सुधार और देशोद्धार का कार्य किया। दयानन्द विद्यालय, अजमेर ने भारतीय संस्कृति के साथ राजनीतिक चेतना भी जागृत की। आर्यसमाज ब्रिटिश शासन की दृष्टि में सदा संदिग्ध रहा, परन्तु इसी से पं. गोविन्द बल्लभ पंत, चौधरी चरण सिंह, सुचिता कृपलानी जैसे नेता निकले।

पत्रकारिता के क्षेत्र में भी आर्यसमाज ने देशभक्ति का प्रचार किया—'देश हितैषी' (1882), 'भारतोद्धारक' (1885), 'परोपकारी' (1888), 'अनाथरक्षक' (1895), 'धर्मवृतांत' (1910) और 'आर्य मार्तण्ड' (1923) जैसे पत्रों ने स्वदेशी, स्वभाषा और राष्ट्रीय जागरण को बल दिया।

'आर्य मार्तण्ड' सहित आर्यसमाज की पत्र-पत्रिकाओं ने सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक जागरण को गति दी। 'अजय' मासिक (सम्पादक दत्तात्रेय बाब्ले) और 'स्वाधीन पत्र' (1931, सम्पादक भूरेलाल) ने स्वतंत्रता और शुद्धि आंदोलन का प्रचार किया, परंतु राजद्रोह के आरोप में 'स्वाधीन पत्र' बंद कर दिया गया। बाद में 'विजय' साप्ताहिक (1937) ने जनआंदोलन और गांधीवादी विचारों का प्रसार किया।

इन पत्रों ने छुआछूत, पदप्रथा का विरोध कर शैक्षिक और राजनीतिक चेतना फैलायी। परिणामस्वरूप अजमेर आर्यसमाज की शिक्षा और पत्रकारिता के माध्यम से राजस्थान में जनजागरण और राजनीतिक आंदोलन का प्रमुख केन्द्र बन गया।

निष्कर्षत: महर्षि दयानन्द सरस्वती ने 'वेदों की ओर लौटो' के साथ स्वराज्य, स्वदेशी और हिन्दी राष्ट्रभाषा का संदेश दिया। उनके विचारों से प्रेरित होकर आर्यसमाज ने शिक्षा, समाज सुधार और राजनीतिक जागरण को एक साथ जोड़ा। अजमेर आर्यसमाज ने विद्यालयों, सभाओं और पत्र-पत्रिकाओं—जैसे देशहितैषी, भारतोद्धारक, परोपकारी, अनाथरक्षक, आर्यमार्तण्ड, स्वाधीन पत्र और विजय के माध्यम से स्वतंत्रता, स्वदेशी, शुद्धि और जनजागरण का व्यापक प्रचार किया। आर्यसमाज की इस शिक्षा और पत्रकारिता ने राष्ट्रीय चेतना को जाग्रत कर ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संघर्ष की भूमि तैयार की। इस प्रकार आर्यसमाज ने सामाजिक सुधार, शिक्षा विस्तार और राजनीतिक स्वतंत्रता—तीनों क्षेत्रों में अमूल्य योगदान दिया।